सुधानिधि

(भावात्मक गुम्फन)

महोपाध्याय माणकचन्द रामपुरिया

समर्पण

आज सुधानिधि के अन्तर में-
जागी नयी तरंगें;
नया सृजन होता है जिससे-
वैसी विमल उमंगें।

माणकचन्द रामपुरिया

अपना कथन

सुधानिधि की कविताएँ मेरे हृदय-सिन्धु के ऐसे रत्न, जिनकी आभा कभी म्लान नहीं हो सकती। ये हृदय के अत्यन्त निकट के निवासी रहे हैं। इसी कारण मेरे हर सुख-दुख के साक्षी रहे हैं। हमारे जीवन में सुख भी आए, दुख भी आए। सुख आए, वसन्त आए जीवन-बाग में नव-नव फूलों का प्रस्फुटन हुआ। किन्तु आज ये सारे सुख के अवदान कहाँ विलीन हो गए, नहीं जानता। सब कुछ एक स्वप्न की तरह बीत गया। लगता है, बचपन था- माटी के घरोंदों से खेल रहा था। चुपके से किशोर और यौवन ने प्रवेश किया और फिर माटी के सारे घरोंदे समाप्त हो गए। कितना तुनुक था वह सारा स्वप्न। अच्छी तरह उन्हें देख भी नहीं सका और नींद टूट गयी। आज वे सुख के क्षण नहीं है। मात्र उनकी स्मृतियाँ अवशेष हैं। आज अपने दुख की अनुगूँज सुन रहा हूँ। किन्तु, अवश्य सत्य है कि मेरी कविताएँ बराबर मेरे साथ रही हैं। सुख के क्षणों में यही मधुमास में फूलों की बहार बनी और आज दुख के क्षणों में इन्हीं का साथ सावन के बरसते हुए मेघों में मिला। कविता ने मुझसे अपना दामन कभी नहीं छुड़ाया। न मैं ही कविता को छोड़ सका और न कविता मुझे छोड़ सकी। हम-दोनों का यह अटूट संबंध सदा बना रहा। सुधानिधि की कविताएँ जीवन की वैसी ही रागनियाँ हैं जो प्रत्येक सुख-दुख में, सरगम की झंकार बनी रहीं। मैं इन कविताओं के साथ जीवन जीआ हूँ और आज भी जी रहा हूँ। इन कविताओं से मुझे सच्चा आनन्द मिला है- क्योंकि ये मेरे हृदय की आवाज हैं। विश्वास है, मेरे पाठकों के श्रवणों में भी इन रचनाओं की गूँज पहुँच कर उन्हें आनन्द लाभ करायेंगी।

माणकचन्द रामपुरिया

रामपुरिया भवन
रामपुरिया मार्ग
बीकानेर-334001

महोपाध्याय श्री माणकचन्द रामपुरिया
संक्षिप्त परिचय

महोपाध्याय श्री माणकचंद रामपुरिया की साहित्य साधना विरल और अनुपम है। वे शब्द संसार के अखण्ड साधक हैं। रचना उनका धर्म है; मानवीय मूल्य उनके लिए दीप्तियाँ हैं और भारतीय संस्कृति उनके लिए प्रेरणा की अजस्र धारा है। उन्होंने काव्य की सभी धाराओं में रचना की- खण्ड काव्य, स्फुट काव्य और प्रबन्ध काव्य पर उनकी विशेष पहचान महाकाव्यों के महाकवि के रूप में रही है। 1955 से अपनी काव्य यात्रा को शुरू करके उन्होंने आज तक 60 काव्य कृतियों का सृजन किया है जिनमें 30 महाकाव्य, 26 स्फुट काव्य, 3 खण्ड काव्य तथा एक शोध प्रबन्ध सम्मिलित हैं।

शब्द साधना उनके लिए यज्ञ नहीं, एक महायज्ञ है। न तो उनकी कलम विराम लेती है और न उनकी मन की तरंगें। वे 'चरैवेति-चरैवेति' के उपासक हैं। प्रकृति की तरह उनकी कविताएँ भी प्रयोजनधर्मी हैं। प्रयोजन है; इंसान को और अच्छा इंसान कैसे बनाया जाए; उसके मन से कलुष को कैसे दूर किया जाए, मानव मूल्यों का परिरक्षण कैसे हो और सृष्टिक्रम में मनुष्य की महत्ता को कैसे कायम रखा जाए।

हिन्दी साहित्य के दिग्गज साहित्यकारों और समीक्षकों ने उनकी कविताओं की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। इनमें आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, पंडित शिवपूजन सहाय, डॉ रामकुमार वर्मा, डॉ. नगेन्द्र, प्रोफेसर कल्याणमल लोढ़ा, सीताराम चतुर्वेदी, गोपालदास नीरज, अक्षयचंद्र शर्मा, कन्हैयालाल सेठिया और शंभूदयाल सक्सेना आदि सम्मिलित हैं। उनके काव्य की सराहना करने वाले और भी अनेक लोग हैं पर रामपुरियाजी का मूल लक्ष्य तो साधना है, सराहना नहीं। वे युग के काल पटल पर अपने शब्दों को अंकित करते चलते हैं; उनमें से कुछ शब्द तो कालजयी होंगे ही; बस इसी धुन में रचे जा रहे हैं- रचे जा रहे हैं। यह एक अखण्ड, अनथक यात्रा है जिसके पाथेय हैं शब्द और जिसका सम्बल है साधना।

पंडित शिवपूजन सहाय के अनुसार उनकी कृति (मधुज्वाल) "साहित्य के प्रखर प्रशस्त पथ का दीप स्तम्भ" है तो डॉ. नगेन्द्र का मानना है कि "छंदों की नूतन योजनाएँ प्रस्तुत करने पर भी- मात्राओं, लय व गीत के बंधन कहीं शिथिल नहीं होते। छंदों में सर्वत्र सरल मृदुल गति है।" आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने 1963 में अभिमत व्यक्त किया था कि "रामपुरियाजी उत्साह परायण युवा कवि हैं।" डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार "उनकी कविताओं में एक संगीत है जो शब्दों की परिधि पार करके हृदय में गूंजता रहता है।" प्रोफेसर कल्याणमल लोढ़ा उनमें "एक सिद्ध कवि की अंत:शक्ति" देखते हैं तो शंभुदयाल सक्सेना उनके काव्य में "नया स्वर, नई राग एवं नई आशा" को विद्यमान पाते हैं।

रामपुरियाजी ने महाकाव्यों की रचना में एक कीर्तिमान स्थापित किया है- संख्या की दृष्टि से भी और गुणवत्ता की दृष्टि से भी। वे निरंतर गतिशील हैं; निरंतर लिखते जा रहे हैं। बीसवी शताब्दी को ऐसे वीतराग, अजातशत्रु और तपस्वी शब्द साधक पर गर्व है और होना भी चाहिए।

पवनपुरी, बीकानेर **भवानीशंकर व्यास 'विनोद'**

अनुक्रमणिका

सूत्रधार को देखा है

पूछ रहा मन-
    सूत्रधार को देखा है?
जिसने जाल बिछाया ऐसा-
    उसको तनिक परेखा है?

उठी यवनिका-
    हम सब आए।
तरह-तरह के-
    रूप बनाए।

उसकी इच्छा पर ही हम सब-
    अपना पार्ट अदा करते हैं।
सूत्रधार के इंगित पर ही-
    रंगमंच पर पग धरते हैं।

अपनी कुछ भी चाह नहीं है-
    औरों की परवाह नहीं है
लेकिन मेरा सूत्रधार ही
    सब की अन्तिम रेखा है।

इसलिए मन पूछ रहा है-
    सूत्रधार को देखा है?

अभिनय के हित हमें भेजकर-
अपने हुआ अदृश्य कहाँ पर
खोज रहा हूँ अग-जग सारा-
मिला न अब तक कूल-किनारा।

★ ★ ★

अनायास कुछ इंगित आया-
लगा किसी ने मुझे जगाया

बोला-
अपने भीतर देखा है?
ढूँढ़ रहे हो-
बाहर क्यों कर,
अपने को तनिक परेखा है?

सफल भूमिका सभी निभाएँ-

साथ सभी के रोएँ-गाएँ;

सूत्रधार है चतुर खेवैया-

सब की नाव वही है खेता।

मत मानो अपने को नेता।

हम सब केवल हैं अभिनेता।।

शीश नवाओ

जिसने सृष्टि बनायी उसके-
आगे शीश नवाओ।
गा सकते हो, तो बस उसकी-
केवल महिमा गाओ।।

कैसे-कैसे फूल खिले हैं-
कितने अनमिल स्वयं मिले हैं,
उसको विस्तृत भू-मण्डल का-
सबको रूप दिखाओ।
जिसने सृष्टि बनायी उसके-
आगे शीश नवाओ।।

चिड़ियों की चह-चह में गाता-
उसका ही स्वर प्रतिपल आता;
वेद-मंत्र की आभा में ही-
उसकी ज्योति जगाओ।
जिसने सृष्टि बनायी उसके-
आगे शीश नवाओ।।

ऊसर-परती तक खिल जाती-
उसके करुणा की छवि छाती;

वर्षा की बूँदों में उसकी-
ममता के कण पाओ।
जिसने सृष्टि बनायी उसके-
आगे शीश नवाओ।।

सभी ओर है उसकी लाली-
उसरो ही है सब उजियाली;

बार-बार यश उसका केवल-
जीवन में दुहराओ।
जिसने सृष्टि बनायी उसके-
आगे शीश नवाओ।।

कैसा पार्ट निभाया

क्या बतलाऊँ, अब तक मैंने-
कैसा पार्ट निभाया।

मिली भूमिका जो भी मुझको-
मैंने अपनी समझा उसको;
पग-पग आकर सदा किसी ने-
मुझको पाठ पढ़ाया।

कोई शक्ति अनन्य यहाँ है-
करती जो सब धन्य यहाँ है,
उसने ही इस रंग-मंच पर-
हम सबको है लाया।

उसकी जैसी इच्छा रहती-
बात वही चुपके से कहती;
मैंने वही किया जो उसने-
अब तक है बतलाया।

अच्छा और बुरा क्या जानूँ?
ज्ञान नहीं यह सब पहचानूँ।
उसकी मर्जी से ही मैंने-
भू पर पाँव बढ़ाया।

★ ★ ★

उसकी इच्छा होगी जब तक-
चलता खेल रहेगा तब तक,
वही समेटेगा, जिसने है-
यहाँ प्रपंच बिछाया।

क्या बतलाऊँ, अब तक मैंने-
कैसा पार्ट निभाया।।

हर आँख में समाना नहीं अच्छा

भूल कर उस ठौर-
मत जाना;
जहाँ पर आदमी-
छोटा लगे।।

उस बुलन्दी पर-
नहीं आना;
आदमीयत का जहाँ पर-
चित्र भी खोटा लगे।।

हड्डियाँ अब रीढ़ की-
तो टूटती है;
हर जगह खुद को-
झुकाना नहीं अच्छा।।

मत चलो बाजार में-
आप अपने को इस तरह,
तोहफा बनाना नहीं अच्छा।

याद रक्खो-
हर सख्श की आँखों में-
समाना नहीं अच्छा।

खाई पट जायगी

तुम जिसे जिन्दादिली कहते
उसे मैं-
कह रहा कमजोरियाँ।

तुम हँसी में-
टालते हो,
बात सारी-
और कहते-
हैं यही लाचारियाँ।।

कौन-सी है वात जिस पर-
टिक न पाते आज तक-
आप अपनी गलतियों पर
मुस्कुराते आज तक।

धूप कड़वी हो गयी-
है आज छतरी तान लो;
तुम जहाँ भी जा रहे हो-
जीत का अरमान लो।

साधना की लौ जगाओ-
रात तो कट जायगी।
एक खाई जो अड़ी है-
आप ही पट जायगी।।

जीओ औ' जीने दो

जीओ औ' जीने दो।।

कितना विस्तृत व्योम मिला है-
धरती जिस पर फूल खिला है;
सबकी खातिर नील गगन है-
सब की धरती औ' कण-कण है;
नदियों का जल पीओ खुद भी
औ' सब को पीने दो।
जीओ औ' जीने दो।।

करुणा बनकर मेह बरसता-
आती भव में नयी सरसता;
सब की खातिर बंजर-परती-
बनती उर्वर भूखी धरती;
दरकी छाती, खुद भी सीओ-
औ सबको सीने दो-
जीओ औ' जीने दो।।

पेड़ों में जो फल हैं आते-
खाकर जन-जन सभी अघाते;
प्रकृति किसी को नहीं रोकती,
किसी हृदय को नहीं टोकती;
प्रकृति सदा कहती है- जीओ,
औ' सबको जीने दो।
जीओ औ' जीने दो।।

सब की सोचो

केवल अपनी बात न सोचो-
सोचो सब की तनिक भलाई।

होड़ लगाकर हथियारों की-
भीड़ बढ़ाकर औजारों की;
निश्चय ही तुम सुख पाओगे
लेकिन इसके मिट पाएगी-
किसके मन की काली काई?
सोचो सब की तनिक भलाई।।

★ ★ ★

करते तुम परमाणु-परीक्षण,
पास तुम्हारे सब संरक्षण;
लेकिन सोचो, उसकी जिसके-
पास न कोई साधन-वैभव-
सब ने जिसकी नाव डुबाई।
सोचो सब की तनिक भलाई।।

★ ★ ★

भाव उदार रहें अन्तर के-
उमड़ें प्यार सभी के घर के;
हृदय-हृदय में उमड़े ममता-
मानव-मानव एक बने सब-
भागे जग से कुटिल लड़ाई।
सोचो सब की तनिक भलाई।।

गम्भीर व्यथा

मेरी तो गम्भीर व्यथा है।

किसे सुनाऊँ, कौन सुनेगा?
कोई मेरा भार न लेगा,
बड़ी पुरानी प्रीति कथा है।
मेरी तो गम्भीर व्यथा है।।

वन की कोमल मंजरियों ने-
प्यार-भवन की मृदु परियों ने-
इसे सँवारा यही प्रथा है।
मेरी तो गम्भीर व्यथा है।।

खेल नहीं है इसे सुनाना-
मन में इसका राग जगाना;
साधारण यह नहीं; यथा है।
मेरी तो गम्भीर व्यथा है।।

कुन्दन-से हम तप कर निकलें

जग की ज्वाला सुलग रही है,
झंझा भी सब ओर बही है;
ऐसे में भी शीश उठाएँ-
निकलें घर से हम सब पहले।
कुन्दन-से हम तपकर निकलें।।

दुनिया है काँटों की बाड़ी-
जीवन की है उलझी झाड़ी;
कदम-कदम-संघर्ष-निरत रह-
इनकी घातक कसकन सह लें।
कुन्दन-से हम तपकर निकलें।।

व्यथा न कोई बाँट सकेगा-
अपनी ही सब बात कहेगा;
नहीं किसी को घाव दिखाएँ
मन मारे छुपके हम रह लें।
कुन्दन-से हम तपकर निकलें।।

क्या लिखते हो

आखिर इतना क्या लिखते हो?

कहाँ-कहाँ के भाव सँजोकर-
हार बना लाते हो सुन्दर,
उनके साथ यही लगता है-
शायद तुम भी अब बिकते हो।
आखिर इतना क्या लिखते हो?

पत्ती-पत्ती तक कुछ कहती-
कलियाँ अन्तर-तर में रहती;
इनकी प्रेम-कहानी सुन्दर-
शायद तुम भी कुछ सिखते हो।
आखिर इतना क्या लिखते हो?

जग की आँखों में तुम जगते-
मधुर स्नेह के रस में पगते;
भौंरों के दल में तुम कोई-
मधुपायी भौंरा दिखते हो।
आखिर इतना क्या लिखते हो?

धन्य हो

प्यार एक तत्त्व है-
    प्राणवान का,
जिसे कोई प्राणवान ही-
    जानता है।

यों कहने को तो-
    लोग कहते हैं,
        कविता भावुकता की
            निशानी है।
लेकिन कवि ऐसा नहीं-
            मानता है।

कविता-
    कवि के प्राणों-
        की भाषा है।।
उसके जीवन का समस्त-
    सुख-दुख,
        उसकी आशा-निराशा है।

भावों का आवेग-
जगता है;
कविता को वाणी मिलती है।
उद्गारों की-
कलिका खिलती है।।

इसीलिए कविता का
कोई मोल नहीं हैं,
ये अनमोल हैं।
विजयोत्सव के-
वोल है।

हे कवि।
तुम धन्य हो।
धरती पर-
अनन्य हो।।

•

कोमल भाव

मेरे भाव बड़े कोमल हैं-
पत्थर से मत तोलो।

इन्हें तोलना चाहो तो तुम-
आओ, लेकर रोली-कुंकुम;
इनके अभिनन्दन में पहले-
अपना अन्तर खोलो।
पत्थर से मत तोलो।।

इनमें हैं परिमल की भाषा-
ढलते ओस-कणों की आशा,
फूलों की पंखुडियों पर तुम-
भौंरों-से कुछ बोलो।
पत्थर से मत तोलो।।

इनकी आभा रंग-बिरंगी-
इन्द्रधनुष-सी है सतरंगी;
इन्हें देखने को शबनम से-
अपनी आँखें धो लो।

मेरे भाव बड़े कोमल हैं-
पत्थर से मत तोलो।।

मत तोलो

पैसों से मत तोलो मेरे-
भावों का संसार।

पैसे तो हैं मिटने वाले-
जग की धूल समान;
इनको लेकर क्यों जगता है-
मन में गर्व-गुमान;
पैसों से पा सकते हो तुम नहीं किसी का प्यार।
पैसों से मत तोलो मेरे भावों का संसार।।

आँखों की सूनी कोरों में-
छिपे हुए हैं रत्न;
मिल न सकेंगे हीरों से भी-
करके देखो यत्न,
एक बूँद आँसू की कीमत देगा कौन उदार?
पैसों से मत तोलो मेरे भावों का संसार।

कविता है अन्तर की भाषा-
भावों का आवेग;
इसमें मुखरित रहते सारे-
जीवन के संवेग।।
तोल न सकता इन भावों को कोई भी व्यापार।
पैसों से मत तोलो मेरे भावों का संसार।।

गीत शान्ति के गाओ

अपने को समझाओ।
गीत शान्ति के गाओ।।

प्रेम हृदय में जागे-
द्वेष-घृणा अब भागे;
हथियारों को फेंको-
सारा कलुष मिटाओ।
गीत शान्ति के गाओ।।

मानस में हो करुणा-
नयनों में हो वरुणा;
प्रीति हृदय में जागे-
सबको गले लगाओ।
गीत शान्ति के गाओ।।

मानवता के रक्षक-
मानव, बनो न भक्षक;
विश्व शाँति अब आए-
नयी रोशनी लाओ।
गीत शान्ति के गाओ।।

सुधानिधि

भावी बने सहारा-
नभ में ज्यों ध्रुव तारा;
जीवन में जागृति का-
नव संदेश सुनाओ।
गीत शान्ति के गाओ।

गाँव

कह रहे कुछ लोग अब तो–
गाँव शहरों में समाया।
भूलते हम जा रहे हैं–
पूर्वजों की स्नेह–छाया।

किन्तु अब भी गाँव मेरा–
है प्रकृति का रम्य डेरा;
नागरों का रोग इसमें–
अब तलक तो आ न पाया;

दूर अब भी है शहर से–
वासना के सब कहर से;
इसलिए ही गाँव सब की–
आँख में है खूब भाया।

शुद्ध मिलती वायु घर में–
प्रेम मिलता हर डगर में;
दूसरा कुछ रंग इस पर–
अब तलक तो चढ़ न पाया।

★ ★ ★

गाँव शहरों में न आए-
रंग उसका मिट न जाए;
ध्यान दो, ओ देशवासी-
गाँव से संदेश आया।

कह रहे कुछ लोग अब तो-
गाँव शहरों में समाया।
भूलते हम जा रहे हैं-
पूर्वजों की स्नेह छाया।।

छूट रहा है गाँव

छूट रहा है गाँव।

शहरों का आकर्षण भारी–
सुविधा मिलती न्यारी-न्यारी;
इसीलिए तो छूट रहा है–
मुझ से मेरा गाँव।
छूट रहा है गाँव।।

क्यारी-क्यारी घूम चुका हूँ–
गाँवों से मैं नहीं थका हूँ;
शहरों की इस भरी भीड़ में–
हार चुका हूँ दाँव।
छूट रहा है गाँव।।

अब भी गाँव बहुत है उज्ज्वल–
नहीं शहर की कोई हलचल;
अब भी यहाँ हृदय में रहते–
सात्विकता के भाव।
छूट रहा है गाँव।।

दूर देश के खग तक आते–
पेड़ों की छाया में गाते;
दूर चलें कोलाहल से हम–
डालें वहीं पड़ाव।
छूट रहा है गाँव।।

अच्छा लगता है

गाँवों में अच्छा लगता है
सब त्योहार मनाना।

बहुत दिनों से रहते आए-
सुख-दुख सब से कहते आए;
यहाँ खोजना कभी न पड़ता-
मिलने का तनिक बहाना।
अच्छा लगता है गाँवों में-
सब त्योहार मनाना।।

शहरों में सब कटे-कटे हैं-
अपनों से भी हटे-हटे हैं;
कदम-कदम पर शहरों में तो-
पड़ता ठोकर खाना।
अच्छा लगता है गाँवों में-
सब त्योहार मनाना।

लोग यहाँ के भोले-भोले-
सच्ची मस्ती के मतवाले;
अच्छा लगता इनके सम्मुख-
अपना समय बिताना।
अच्छा लगता है गाँवों में-
सब त्योहार मनाना।।

अपना सब परिवार सजाओ-
गाँवों में ही उन्हें जगाओ;
जगती रहे सभ्यता, गाँवों-
को है तनिक बचाना।
गाँवों में अच्छा लगता है-
सब त्योहार मनाना।।

मेरा सुन्दर गाँव

प्रकृति-गोद में बसा हुआ है-
मेरा सुन्दर गाँव।
निर्मल-निश्छल-भोले-भाले;
लोग यहाँ है मधु के प्याले;
प्यार यहाँ देती है कितना-
बरगद-तरु की छाँव।
मेरा सुन्दर गाँव।

सरसों-अरहर-धान उपजता-
हँसती भू पर यहीं मनुजता;
सब सरसाते प्रेम, यहाँ पर-
मिलता नहीं दुराव।
मेरा सुन्दर गाँव।।

खिली चाँदनी में सब सोते-
श्रान्ति-क्लान्ति सब पल में खोते;
हृदय-हृदय में यहाँ पनपता-
समरसता का भाव।
मेरा सुन्दर गाँव।।

प्रकृति-परी नित इसे सजाती-
क्यारी-क्यारी फूल खिलाती;
निर्मल करती रहती सब का-
सब दिन सदा स्वभाव।
मेरा सुन्दर गाँव।।

होश न जाए

कीचड़ मत डालो।
अँधेरे का घाव-
मत पालो।।

पर्व आया-
त्योहार आया;
लेकिन मन-
लगता है क्यों भरमाया।
पहले अपने-
मन को सँभालो।
कीचड़ मत डालो।।

होली रंगों का-
त्योहार है;
भावों में बसा हुआ
मीठा उद्‌गार है।
मन में कोई मैल-
मत पालो।
कीचड़ मत डालो।।

रंग खेलो, खूब खेलो-
किन्तु होश न जाए;
सूरत के साथ-
ऐसा न हो-
सीरत भी बदल जाए।।

आओ, मुहब्बत का-
रंग डालो;
प्यार का अबीर डालकर-
सब को अपना बना लो।
कीचड़ मत डालो,
मत डालो।।

त्योहार

आओ हम त्योहार मनाएँ।
प्रेम-मिलन का रास रचाएँ।।

मातम सूरत दूर भगा कर-
अन्तर-तर में नेह जगा कर;
नव जीवन की ज्योति जगाएँ।
आओ, हम त्योहार मनाएँ।।

होली हो या रहे दीवाली-
खुशियों की ही फैले लाली;
जीभर हम नव गीत सुनाएँ।
आओ, हम त्योहार मनाएँ।।

ईद पर्व में चले मिठाई-
गले मिलें सब भाई-भाई;
मधुर सेवइयाँ, चलो उड़ाएँ-
आओ, हम त्योहार मनाएँ।।

सब त्योहार देश के अपने
भारत-भर के मधुमय सपने
आज यहाँ कल वहाँ जगाएँ।
आओ, हम त्योहार मनाएँ।।

अलग-अलग त्योहार हमारे-
लेकिन सब हैं न्यारे-न्यारे;
व्यक्ति-व्यक्ति की विजय मनाएँ।
प्रेम-भाव की शिखा सजाएँ।।

तारे लगे चमकने

झिलमिल तारे लगे चमकने।
लगे गगन में सब कुछ जगने।।

फूलों ने मधु रस बरसाया-
भौंरों ने मधुगीत सुनाया;
धरती सुख से लगी सँवरने।

ऊपर चाँद गगन में विहँसा-
नीचे मुग्ध चकोरा तरसा;
धड़कन लगी हृदय बढ़ने।

कमल सुकोमल तेरी आँखें-
रस से भींगी दृग की पाँखें;
धीरे-धीरे लगीं झपकने।

★ ★ ★

आओ, गीतों में बस जाओ-
अपना श्यामल रूप दिखाओ;
सागर का मन लगे तरसने।
झिलमिल तारे लगे चमकने।।

तेरी याद सताती

सांध्य-परी जब भू पर आती-
तेरी याद सताती।

काली-काली अलकें फैलीं-
धरती की चादर मटमैली;
तारों की बारात सजाती-
सांध्य-परी जब भू पर आती-
तेरी याद सताती।।

सिहर-सिहर कर पवन सलोना-
सौरभ लाता भर-भर दोना;
तेरी छवि दृग में मदमाती-
सांध्य परी सँग जब है आती-
तेरी याद सताती।।

आओ, मेरे शून्य कक्ष में-
धड़कन बनकर शान्त वक्ष में;
नव-नव कलियों-सी लहराती-
सांध्य-परी जब भू पर आती-
तेरी याद सताती।।

याद आई

संध्या की झुटपुट में सहसा-
याद तुम्हारी आई।

सूरज ढलकर नीचे आया-
लगता अन्तर कुछ मुस्काया;
सहसा तेरी छवि मुस्काई-
याद तुम्हारी आई।

खिला चाँद-सा मुखड़ा तेरा-
तारों का अम्बर में फेरा;
दृग में तेरी छवि छहराई-
याद तुम्हारी आई।

अलकें सुन्दर काली-काली-
काँप रही जिससे अँधियाली;
आँखों में तेरी अँगड़ाई-
याद तुम्हारी आई।

कमल-सरीखी तेरी आँखें-
पलकें ज्यों भौंरों की पाँखें;
मदिर रूप की नव तरुणाई-
याद तुम्हारी आई।

ज्योति जगाओ

मन को मत बेचैन बनाओ।
कोई मनहर गीत सुनाओ।।

जीवन रीता लेकर आते-
दर-दर पर जाकर शरमाते;
अन्धकार है ज्योति-प्रदाता-
साधन कर का नहीं बुझाओ।

प्रेम-पंथ का जो है राही-
उसको सब दिन मिली तबाही;
मंजिल तक आने के पहले-
पथ पर प्रेमी मत घबड़ाओ।

बाहर जगमग, भीतर खाली-
ज्वार भरी है जग की प्याली;
अपने श्रम से वक्र राहों को-
दूर हटा कर, राह सजाओ।

★ ★ ★

सदा रहे विश्वास जागता-
दृग में अतुल प्रकाश जागता;
छँट जाएगा तम का बादल-
मन की जगमग ज्योति जगाओ।

सुधानिधि

रूठ गयी है

कविता मेरी रूठ गयी है
आओ, इसे मनाएँ।

भाव स्वयं ही भावुक मन के-
बनते कविता नील गगन के;
ये हैं मन से बड़े सलोने-
आओ, इन्हें सजाएँ।

रह लेंगे ये माटी पर भी-
यहीं बनेगा इनका घर भी;
फूलों की नव पंखुड़ियों से-
छू कर इन्हें जगाएँ।

कमल-पत्र पर शबनम-जैसे-
कोमल इनके दल हैं वैसे;
इन्द्रधनुप के मादक रँग का-
इनको हार पिन्हाएँ।

कविता है जागृति की भापा-
पर्वत-रोहण की परिभाषा
इस धरती की माटी की हम-
मादक गंध पिलाएँ।

कविता मेरी रूठ गयी है-
आओ, इसे मनाएँ।।

गीतों में जलती है आग

हर गीत की-
    अपनी धुन होती है।
    हर गीत का अपना राग।
चाहे जिस धुन में
पढ़ो, चाहे जैसे
गाओ-
    सब गीतों में
        जलती है एक आग।।

सबेरे चिड़ियों की-
    चहक में जो
        गुदगुदी मिलती है।
संध्या समय-
    नीड़ों में लौटे
        पक्षियों के गीतों से-
            किसी दिल की
                कली नहीं खिलती है।।

आखिर क्यों?

उगते हुए सूरज

और,

डूबते हुए सूरज की

लाली में क्या अन्तर है?

सच समझो–

हर गीत की अपनी धुन है–

हर गीत का अपना राग।

लेकिन–

सब गीतों में जलती है एक आग।।

बड़ा कठिन है

जग में पग-पग खड़ी रुकावट-
चलना बड़ा कठिन है।
चाहा राह बने सुख कारी-
रहे न पथ में कुछ लाचारी;
लेकिन जग में पंथ न कोई-
मिलता अब मसृण है।
चलना बड़ा कठिन है।।

अपना क्षण-क्षण बीत रहा है-
जीवन का घट रीत रहा है;
इस जीवन में शेष न अपना-
कोई भी पल-छिन है।
चलना बड़ा कठिन है।।

करो न जग से कोई आशा-
व्यर्थ यहाँ है सब परिभाषा;
कौन यहाँ क्या देगा, सब पर
जीवन का खुद ऋण है।
चलना बड़ा कठिन है।।

मुक्त गगन में मेह घिरे हैं-
भाग्य भुवन के आज फिरे हैं;
मानव का अन्तस्तल कितना-
दिखता आज मलिन है।
चलना बड़ा कठिन है।।

करो साधना

मन को पावन सदा बनाओ।

मन ही है जीवन का रक्षक-
कभी यही बनता है भक्षक;
कभी न भटके इसे बचाओ।
मन को पावन सदा बनाओ।।

खाली घर भूतों का डेरा-
मन में रहता भरा अँधेरा;
इसमें जगमग ज्योति जगाओ।
मन को पावन सदा बनाओ।।

प्रेम-भाव की कहो कहानी-
निर्मल है गंगा का पानी;
जागो, सेवा-व्रत अपनाओ-
मन को पावन सदा बनाओ।।

डरो न तिलभर कभी प्रलय से-
करो साधना सदा हृदय से;
साधक का व्रत सदा निभाओ।
मन को पावन सदा बनाओ।।

ज्योति का जयगान

शाप को वरदान कर लो।

तुम मनुज हो, भाग्य जग के-
एक अविचल चिन्ह मग के;
आप अपनी चाहवाली-
सृष्टि नव निर्माण कर लो।
शाप को वरदान कर लो।।

आ रहा तूफान आए-
मेघ नभ में घुड़मुड़ाए;
नाव मेरी चल पड़ी तो-
धार को जलयान कर लो।
शाप को वरदान कर लो।।

देखते हो भूमि-अम्बर-
काँपते सब आज थर-थर;
तम मिटाओ, ज्योति लाओ-
ज्योति का जयगान कर लो।
शाप को वरदान कर लो।।

जीवन की जय गाओ

मन की ज्योति जगाओ।

विस्तृत है यह अम्बर-धरती-
दृग के आगे सदा उभरती;
तुनुक रूप धर आए लेकिन-
अब विराट बन जाओ।
मन की ज्योति जगाओ।।

अन्धकार है मन में भीषण-
करता है मन क्षण-क्षण क्रन्दन;
इसमें नवल प्रकाश सजाकर-
जगमग जग कर जाओ।
मन की ज्योति जगाओ।।

फैल रही है कैसी जड़ता-
मानव-मानव से है डरता,
सत्य-अहिंसा-मंत्र फूंक कर-
निर्भय उसे बनाओ।
मन की ज्योति जगाओ।।

मिट-मिट कर जग नूतन बनता-
सब दिन भू पर एक न रहता;
सृजन-सचेतक तुम इस भव के-
जीवन की जय गाओ।
मन की ज्योति जगाओ।।

है रूदन में हास मेरा

है रूदन में हास मेरा।

सृष्टि में जब दृष्टि जागी-
एक अनुपम रूप छाया,
क्या बताऊँ, जाग उसने-
कब नहीं मुझको रूलाया?
आज तक जगकर दृगों में वह बना है त्रास मेरा।
है रूदन में हास मेरा।।

भावना के वश विवश हो-
पंथ अपना गढ़ रहा हूँ;
वेदना के हर प्रहर को-
साधना से मढ़ रहा हूँ,
जग भला क्या जान सकता? कर रहा परिहास मेरा।
है रूदन में हास मेरा।।

विघ्न-बाधा को हटाकर-
कर रहा निर्माण नूतन,
भेद कर तम की शिला को-
ला रहा दिनमान नूतन;
एक दिन जग जान लेगा- है यही इतिहास मेरा।
है रूदन में हास मेरा।।

फैलेगा उजियाला

पल पल मिलते शूल राह में-
जलता जीवन सतत् दाह में।
संभल न क्षणभर को भी पाता-
संचित सारा कोष गँवाता।

जहाँ कहीं जो मिलते साथी-
सब-के-सब लगते उत्पाती।
कोई मन की बात न कहता-
होंठ सटाए चुप ही रहता।

सब कहते हैं- राज न खोलो-
मन से कोई बात न बोलो।
जिस पर जो आघात पड़ेगा-
अपनी रक्षा आप करेगा।

इसीलिए कहते चुप रहना-
भीतर-भीतर सब कुछ सहना।
बाहर लेकिन कुछ मत कहना-
यही सीख जीवन में गहना।

दुनिया जागी शीश नवाओ,
अपनी गाथा उसे सुनाओ।
शीतल होगी मन की ज्वाला-
भव में फैलेगा उजियाला।।

गिर कर ही नर आगे बढ़ता

जीवन का पथ बड़ा विकट है।
पग-पग पर भीषण संकट है।।
लेकिन संकट बल देते हैं-
श्रान्ति हृदय की हर लेते हैं।

कहते सब यह-शाप मिला है-
मन अशान्त हो जहाँ हिला है।
किन्तु शाप वरदान बना है-
इस पर ही यह व्योम तना है।

जिसको कहते- ह्रास हुआ है-
उससे सबल विकास हुआ है।
मिट-मिट कर दुनिया बनती है-
नए रूप में नित ढलती है।

उन्नति का पथ गिर कर मिलता-
यहाँ नहीं है कुछ अनमिलता।
गिर-गिर कर सब आगे बढ़ते-
उच्च शिखर तक पर नर चढ़ते।

गिरने वाले कभी न डरते-
अपनी राह बनाया करते।
जो भी करते जीवन में श्रम-
वे इतिहास बनाते हरदम।।

परमाणु परीक्षण

धरती पर अब गूँज रहा है-
महानाश का गान।
लगा सिहरने आज अचानक-
मानवता का प्राण।

होड़ लगी है हथियारों की-
खूब परीक्षण होते,
पार समुन्दर के देशों के-
पक्षी तक हैं रोते।

बारूदी गंधों से दूषित-
हवा हुई कल्याणी,
कितना आज विषाक्त हुआ है-
सागर का भी पानी।

बड़े-बड़े जीवों को देखो-
तट पर मरे पड़े हैं;
ऊँचे पर्वत के तरूवर भी-
लगते सड़े-सड़े हैं।

रोको अब इस अनाचार को-
मत दूषण फैलाओ,
नए परीक्षण के पर्दे में-
जग को नहीं रुलाओ।

नहीं रही मानवता तो कुछ-
शेष नहीं बच पाएगा;
अब विज्ञान स्वयं धरती पर-
अपनी मौत बुलाएगा।।

मत होने दो लड़ाई

मत होने दो कहीं लड़ाई।

मानव कितना टूट चुका है-
देखो इसकी किस्मत;
संघर्षों के क्षुब्ध सत्य में-
बची न इसकी अस्मत;
आज पुनः दस्तक देती है-
गरम हवा जो आई।
मत होने दो कहीं लड़ाई।

रोको, जैसे भी हो रोको-
महानाश का नर्त्तन;
मत होने दो महाकाल का-
फिर से ध्वंसक पुनरावर्त्तन।
जल जाएँगे इस ज्वाला में-
घर-घर के भाई-भाई।
मत होने दो कहीं लड़ाई।।

शेष भला क्या बच पाएगा-
सब कुछ राख बनेगा;
महानाश का अपयश मानव-
अपने ऊपर लेगा;
मिट जाएगी मानवता की-
सारी पुण्य कमाई।
मत होने दो कहीं लड़ाई।।

अनागत का स्वागत

आज वैज्ञानिक युग में-
हम जाग रहे हैं
भौतिकता के पुराने परिवेश के-
न जाने कितने-
थपेड़े सहे हैं।।
हम जाग रहे हैं।।

हमारा सारा वातावरण-
खोज रहा है नया मूल्यांकन।
जीने का ढंग,
परिस्थितियों का रंग;
सब बदल गए हैं-
सब बदल रहे हैं।
हम ने न जाने-
कितने थपेड़े सहे हैं।
हम जाग रहे हैं।।

अब पर्व त्योहारों को-
नए साँचे में ढालना है।
व्यर्थ के आडम्बर से
बचना है
उन्हें टालना है।।

होली के रंग खेलें-
किन्तु सूरत को
बिगड़ने और बिगाड़ने से बचाएँ।
दीपावली मनाएँ-
खूब मनाएँ-
किन्तु अपना या दूसरों का-
घर जलाने से बचाएँ।।

बीसवीं सदी बीत गयी-
इक्कीसवीं सदी का-
स्वागत है।
वह सचमुच बड़ा भव्य है;
आज जो अनागत है।।

मन घबड़ाता

इस दुनिया में मन घबराता।
बाधा-बन्धन पग-पग मिलते-
आशा सुमन न क्षणभर खिलते;
मन का सब विश्वास अचानक-
टूट-टूट कर है छितराता।
इस दुनिया में मन घबराता।।

स्वार्थ-निरत सब का उर अन्तर-
हृदया हुआ है सब का पत्थर;
जहाँ न कोई करुणा जगती-
मन जिससे विह्वल हो जाता।
इस दुनिया में मन घबराता।।

घर-घर देखा बड़ा खेद है-
बाहर-भीतर बहुत भेद है;
बाह्य रंग तो आँख लुभाता-
भीतर राक्षस सदा डराता।
इस दुनिया में मन घबराता।।

मैं केवल जीवन का रागी-
सतत् साधना का अनुरागी;
जीवन-स्वर सुलगाने को नित-
अपने मन को हूँ समझाता।
इस दुनिया में मन घबराता।।

मेरे पास तुम्ही हो केवल

मेरे पास तुम्ही हो केवल।
तुम्हें छोड़ कुछ नहीं जानता-
नहीं किसी को तनिक मानता,
तुम्ही हमारे जीवन-सम्बल।
मेरे पास तुम्हीं हो केवल।

सुबह-सुबह जब आँखें खुलती-
नव प्रकाश से धरती धुलती;
दिखती आभा तेरी उज्ज्वल-
मेरे पास तुम्हीं हो केवल।।

दिन में तुम हो सफल प्रेरणा-
भावुक मन की सकल एषणा;
तुम ही हो जीवन की हलचल-
मेरे पास तुम्हीं हो केवल।।

तेरा अग-जग रहता उभरा-
मुझको लेकिन नहीं दूसरा;
तुम पर ही मन मेरा अविकल-
मेरे पास तुम्हीं हो केवल।।

हे करुणामय आओ, आओ।
मुझको अपने योग्य बनाओ।।
शान्त बने मन मेरा चंचल-
मेरे पास तुम्हीं हो केवल।।

होने दो

आँखें रोती हैं
रोने दो।

भीतर जो तम-
है बैठा,
अपने भावों-
में ऐंठा;

उसको बहना है,
कुछ तो कहना है;
ये निधियाँ खोती हैं
खोने दो।
आँखें रोती हैं
रोने दो।।

ये नए बीज हैं
विकास के,
फूलों के सौरभ
सुवास के;

ज्वाला में जपने दो-
अन्तर को तपने दो;
ये नई पौध के अंकुर हैं
बोने दो।
आँखें रोती हैं-
रोने दो।।

एक शक्ति है जिसकी लीला-
चलती है;
सारी दुनिया उसके साँचे में
ढलती है;

कहने सुनने की बात नहीं।
रहने वाली है रात नहीं।
जो होता है-
होने दो।
आँखें रोती हैं-
रोने दो।।

रहो जागते

रहो जागते।

निखिल विश्व है-
धोखा भारी,
अपनी-अपनी-
सब की है लाचारी;

तरह-तरह का-
होता नर्त्तन,
जगता दृग में-
नव आकर्षण;

यह सब माया-
का है फेरा,
जगह-जगह पर-
है ठगनी का डेरा;
इसके बन्धन में
मत आओ-
रहो भागते।
रहो जागते।।

मन जागा तो-
सब है जागा,
अन्यथा यह है-
बड़ा अभागा;

कहाँ पहुँच कर-
यह अटकेगा,
आश्रय किन
नयनों का लेगा;

नहीं जानता-
इसको कोई,
सब में यह छवि-
रहती सोई;
जाग्रत मन का-
काम यही है-
रहो त्यागते।
रहो जागते।।

खुशी मनाएँगे

क्या तुम्हारे कानों में-
जूँ नहीं रेंगती?

मानवता की एक
लाश-
तुम्हारे सामने फेंक
दी गयी है।
जलती हुई चिता की
ज्वाला में उसे
सेंक दी गयी है।।

फिर भी तुम्हारी
नींद नहीं टूटी;
सर्वभक्षी सुरसा की
तरह तुम्हारी कामना
नहीं छूटी।

धन्य हो तुम
तुम्हारी
कुम्भकर्णी नींद ने
सब कुछ लूट ली;
और बदले में तुम्हें
एक छूट दी।

मानवता के रक्त से
अपना दामन रँग सकते हो।
अपन तन-बदन
ढँक सकते हो।

लेकिन कोई
देख नहीं सकता।
कोई परेख नहीं सकता।

लोग तुम्हारा
यश गाएँगे,
तुम्हारे जीत की
खुशिया मनाएँगे।

लोग कहते हैं-
तस्करी,
एक मधुकरी है।
इससे डर कैसा?
समय आने पर-
सब ठीक कर लेगा पैसा।।

इतना ही नहीं
यह भी सुनने में आता है-
पढ़ने में आता है।
और हिम्मत-
बँधाता है।

रोको, रोको–

गाँवों को मत उजड़ने दो।

फूलों को मत झड़ने दो।।।

शहरों में आदमी–

मर जाएँगे

आदमीयत सड़ जाएगी–

बचाओ–

आदमी को मत मरने दो।

आदमीयत को मत सड़ने दो।।

बेड़ा पार करेगा

ऊपर है नीलाम्वर
फैला।
नीचे स्वच्छ धरा पर देखो-
खेल रहे हैं सुन्दर-
छैला।।

यौवन के मद में-
मदमाते,
दिखते सब हैं रंग-रंगीले।
नयन सभी के हुए पनीले।।

मादकता में-
इठलाते हैं,
अधर फड़कते-
कुछ गाते हैं।

नहीं किसी को-
तनिक समझते;
मन में दम्भ-
दमकते रहते।

मत इठलाओ-
शान्त रहो मन,
है विवेक ही-
केवल चिन्तन।

एक दिवस सब
मिट जाएगा,
कुछ भी काम
नहीं आएगा।

तब मन शान्त
रहेगा कैसे,
कुछ अभ्यास करो
अब जैसे-तैसे।

इससे बेड़ा
पार लगेगा।
खेवनहार सभी की-
नैया का निश्चय-
उद्धार करेगा।।

धर्म-चेतना का उद्वेग

धर्म का नाम न लो।

धर्म एक आस्था है,
विश्वास है- चेतना का उद्वेग है।
किन्तु भौतिक संवेगों से-
उसका क्या हिसाब?
मानवता पूछ रही है-
बोल मानव क्या है जवाब?

मंदिर के नाम पर तुमने
मस्जिद गिराए
और मस्जिद के नाम पर
मंदिर ढाह दिए।
धन्य है तुम्हारे धर्म-
धन्य है तुम्हारे कर्म।

तुमने ही ईसा को-
सूली चढाया
सुकरात को-
विष पिलाया।
महावीर के कानों में
कील ठोके गए
मानवता के नाम पर-
गोलियाँ दागी गयीं
मनुष्यता पर।

धन्य है तुम्हारा धर्म
धन्य है तुम्हारी बोली;
आज
सभी ओर घूम रही है
तुम्हारी टोली।

लेकिन, इतना–
याद रहे;
जो कहना चाहो, कह लो
किन्तु धर्म का नाम न लो
धर्म को बदनाम न करो।

काँटों का ताज

फूलों का यह ताज नहीं है-
यह तो है काँटों का ताज,
जिसे पहन कर नेता-गण सब-
रखते हैं जनता की लाज।

जिसे एक दिन चक्रावत ने-
रख राणा प्रताप के सर पर,
रण की रणभेरी फूँकी थी-
भारत की हर डगर-डगर पर।

अपनी जान हथेली पर रख-
उसने भी था फर्ज निभाया,
लौटा कर फिर से मेवाड़ को-
शान्ति पूर्ण था राज बसाया।

बात न पूछो अब भारत की-
भूखों की भट्ठी जलती है;
भूख-भूख की जलती ज्वाला-
में सूखी हड्डी पलती है।

★ ★ ★

भूख-भूख की याद लिए ही-
सारी रात सुबह होती है;
दो टुकड़ों की चित्कारें लें-
कंकाली काया सोती है।

अरे! यहाँ मरते मुर्दों के-
भी टुकड़े छीने जाते हैं;
अरे! यहाँ ही निर्दयता से-
नंगे तन खींचे जाते हैं।

अरे! यहाँ के भेद-भाव से-
कम्पित है भू-गोल हमारा;
स्वयं हिमालय देख रहा है-
जाने किसने उसे पुकारा।

पथ के आगे पर्वत कैसे-
खड़ा निराशा की बदली में;
खोज रहा आशा की किरणें-
पात-पात औ' कली-कली में।

आज इन्हीं उलझी घड़ियों में-
आशा तनिक जगाए कोई,
बाट जोहती सजग कल्पना
दृग में निर्मल आए कोई।

जिसका अन्तर शुद्ध रहेगा-
वही करेगा बेड़ा पार;
किन्तु आज तो पाप-पंक में-
पड़ा हुआ है सब संसार।

★ ★ ★

आशा है विश्वास प्रबल है-
ऊषा भू पर आएगी;
तिमिर मिटाकर नव प्रकाश की
सबको राह दिखाएगी।।

मैं उन्हीं का

इस मधुर मधुमास में-
मैंने विषम का ताप देखा;
कौन है मंजिल यहाँ-
जिसका कठिन उत्ताप देखा।

आह की भट्ठी जला कर-
हैं जहाँ अब दाग पकते,
औ' गरीबों के लहू से-
हैं जहाँ अरमाँ पनपते।

आज हैं जलते हमारे-
सामने कैसे अँगारे,
जल रहा है देश मेरा-
पर कहीं हँसते नजारे।

है गरीबी चीखती क्यों?
पूछती हैं सब दिवारें,
साधना औ' शक्ति लेकर-
कौन किसको अब पुकारे।

प्रलय बनकर झूमती है-
क्यों यहाँ काया कँगाली;
क्यों निशा के शान्त मुख पर-
है चमकती रक्त-लाली।

क्यों निराशा-गर्भ से है-
आश की आभा चमकती;
क्यों व्यथित आकुल हृदय से-
आग की लपटें निकलतीं।

चाहता है दिल यही अब-
मैं बनूँ ऐसा किनारा,
जो तड़पते भूख से नित-
बन सकूँ उनका किनारा।

सिसकियाँ ले-ले यहाँ पर-
जो तड़पते रात-दिन हैं,
पेट आँतों से लगे हैं-
भाग्य जिनके सब मलिन हैं।

जो हमारे ही सदृश हैं-
दो भुजा, दो पाँव वाले,
जो विधाता हैं जमीं के-
पर बने बेठांव वाले।

चन्द्रमा की चाँदनी ही-
है बनी जिनका बिछावन;
औ' निशा की कोठरी में-
हैं छिपे जिनके सुलोचन।

मैं रहूँ सब दिन उन्हीं का-
जो प्रकृति की वाटिका में;
आप अपने मोद-रत हैं-
कुंज-लोचन सारिका में।।

देखो, सागर तक अकुलाया-

बाँह उठाए ऊपर आया;

कैसा उन्माद ज्वार जगाया?

रसवन्ती अब प्यार करो।

बाले अब अभिसार करो।।

सुधानिधि

खोज थका, पर चाह हृदय की-
अब तक हुई न पूरी।।

जिसने चाहा फूल खिलाना-
क्षण भर को भी जी बहलाना;
उसके आगे तम घिर जाता-
यह कैसी मजबूरी?
खोज थका, पर चाह हृदय की-
अब तक हुई न पूरी।।

लगता, जब सुख पास बहुत है-
दुख थोड़ा, पर हास बहुत है;
लेकिन दूर क्षितिज में दिखती-
भू अम्बर की दूरी।
खोज थका, पर चाह हृदय की-
अब तक हुई न पूरी।।

जीवन और मरण के तट-से-
जीव सदा माटी के घट-से;
झूल रहा है सदा दृगों में-
सपना ले अंगूरी।
खोज थका, पर चाह हृदय की-
अब तक हुई न पूरी।।

* * *

हास वही है, रुदन जहाँ पर-
मिला सुधानिधि किसे यहाँ पर?

मानव के जीवन में रहती-
लिप्सा सदा अधूरी।
खोज थका, पर चाह हृदय की-
अब तक हुई न पूरी।।